सिविल प्रकीर्ण

माननीय न्यायाधीश आर.एस. नरूला के समक्ष

कंवल सिंह - याचिकाकर्ता

बनाम

हरद्वारी लाल - उत्तरदाता

सिविल प्रकीर्ण ,1971 की संख्या 48-ई
1970 की निर्वाचन याचिका संख्या 1 में
15 मार्च, 1972

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम (1951 का XLIII) - धारा 80, 80ए, 93 और 119 - उच्च न्यायालय ने निर्वाचन याचिका को स्वीकार कर लिया और निर्वाचन को रद्द कर दिया - सर्वोच्च न्यायालय ने निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा की गई अपील में याचिका को खारिज कर दिया और उच्च न्यायालय में व्यय के लिए लागत के बारे में कोई आदेश नहीं दिया - निर्वाचित अभ्यर्थी क्या ऐसी लागतों का हकदार है - धारा 119 का परंतुक - क्या यहाँ लागू होता है।

निर्धारित किया गया कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 119 का परंतुक , केवल उस धारा के दायरे के अपवाद के रूप में कार्य करता है, न कि एक स्वतंत्र प्रावधान के रूप में। इसलिए, संबंधित पक्ष केवल उस स्तर पर अधिकार के रूप में परंतुक को लागू करने का हकदार है जब उच्च न्यायालय को उस धारा के तहत लागत के मामले में अपने विवेक का प्रयोग करने के लिए कहा जाता है। वह चरण तब पहुँचता है जब उच्च न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 98 (बी), 99 और 119 के तहत एक निर्वाचन याचिका का निपटारा कर दिया जाता है, जिसके बाद उच्च न्यायालय समाप्ताधिकार हो जाता है और मामले पर उसका अधिकार नहीं रह जाता है। धारा 119 की भाषा इस मामले में कोई संदेह नहीं छोड़ती है कि यह धारा,

धारा 98 के तहत एक निर्वाचन याचिका के निपटान के समय लागत देने में उच्च न्यायालय के विवेक के प्रश्न से संबंधित है।जैसे ही अधिनियम की धारा 116-ए के तहत उच्च न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील की जाती है और उस न्यायालय के साथ-साथ निचली अदालत में पक्षों द्वारा किए गए खर्च के भुगतान के दायित्व का प्रश्न सर्वोच्च न्यायालय के विशेष क्षेत्राधिकार और विवेक के अंतर्गत आ जाता है। इसलिए जहां उच्च न्यायालय एक निर्वाचन याचिका स्वीकार कर लेता है और निर्वाचन को रद्द कर देता है, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय, निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा की गई अपील में उच्च न्यायालय में लागत के बारे में कोई आदेश नहीं देते हुए याचिका खारिज कर देता है, तो निर्वाचित अभ्यर्थी उनके द्वारा किए गए खर्च का हकदार नहीं होता है, अधिनियम की धारा 119 के परंतुक के तहत उच्च न्यायालय में।

(पैरा 8 और 9)

उत्तरदाता-याचिकाकर्ता हरद्वारी लाल की ओर से आवेदन में प्रार्थना की गई है कि उत्तरदाता-याचिकाकर्ता प्रार्थना कर रहा है कि याचिका लड़ने में याचिकाकर्ता द्वारा किए गए खर्च का भुगतान निर्वाचन याचिकाकर्ता द्वारा करने का आदेश दिया जाए। निर्वाचन याचिकाकर्ता की ओर से प्रतिभूति के रूप में पड़े 2,000 रुपये की राशि और उसके द्वारा जमा की गई किसी भी अव्ययित आहार राशि का भुगतान करने का आदेश दिया जाए और शेष राशि के लिए एक प्रमाण पत्र दिया जाए और याचिकाकर्ता द्वारा अपने गवाह को बुलाने के लिए जमा की गई खर्च की धनराशि को उसे वापस करने का आदेश दिया जाए।

निर्वाचन याचिकाकर्ता के अधिवक्ता आर.एस.हुड्डा।
उत्तरदाता आवेदक व्यक्तिगत रूप से।

निर्णय

माननीय न्यायाधीश आर.एस. नरूला :

यह आवेदन 1970 की निर्वाचन याचिका संख्या 1 से उत्पन्न हुआ है। उत्तरदाता कंवल सिंह ने हरद्वारी लाल आवेदक के निर्वाचन को रद्द करने के लिए याचिका दायर की थी। मेरे निर्णय और आदेश, दिनांक 24 दिसंबर, 1970

द्वारा, निर्वाचन याचिका को लागत सहित स्वीकार कर लिया गया और हरद्वारी लाल का निर्वाचन रद्द कर दिया गया। 1971 की सिविल अपील संख्या 129 (एनसीई), जो इस न्यायालय के निर्णय के खिलाफ आवेदक द्वारा दायर की गई थी, को 7 दिसंबर, 1971 के सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य के निर्णय और आदेश द्वारा अनुमति दी गई थी। औपचारिक निर्णय का प्रासंगिक भाग उनके आधिपत्य के अनुसरण में निकाला गया जो इस प्रकार से है:-

> "(1) 1970 की निर्वाचन याचिका संख्या 1 में चंडीगढ़ में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के दिनांक 24 दिसंबर, 1970 के निर्णय और आदेश को एतद्द्वारा रद्द किया जाता है और उसके स्थान पर 1970 की निर्वाचन याचिका संख्या 1, को खारिज करने का आदेश दिया गया जो उस उत्तरदाता द्वारा उक्त उच्च न्यायालय में दायर की गई है और इसे इसके द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है;
>
> (2) कि यहां पक्षकार इस अपील में अपनी लागत का भुगतान करते हैं और वहन करते हैं और यह अदालत अग्रसर आदेश देती है कि इस आदेश का समय पर पालन किया जाए और सभी संबंधितों द्वारा इसे क्रियान्वित किया जाए।"

(2) हरद्वारी लाल ने तब 9 दिसंबर 1971 को वर्तमान आवेदन दिया, जिसमें उत्तरदाता को इस न्यायालय में निर्वाचन याचिका लड़ने में आवेदक द्वारा किए गए खर्च का भुगतान करने का निर्देश दिया गया और इस आशय का एक और निर्देश दिया गया कि आवेदक को देय ऐसी लागतों की राशि का भुगतान, उत्तरदाता (चुनाव-याचिकाकर्ता) की ओर से प्रतिभूति के रूप में जमा 2,000 रुपये और उसके द्वारा जमा की गई किसी भी अव्ययित आहार राशि से, और याचिकाकर्ता को देय लागत की शेष राशि के लिए एक प्रमाण पत्र दिया जा सकता हैं और याचिकाकर्ता को देय राशि प्रदान की जा सकती है। यह प्रार्थना इस आधार पर मेरे समक्ष की गई है कि यद्यपि इस न्यायालय में पार्टियों की लागत के संबंध में कोई आदेश सर्वोच्च न्यायालय के आधिपत्य द्वारा पारित नहीं किया गया है, आवेदक उत्तरदाता से वहन की गई लागत की वसूली करने

का हकदार है इस लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (इसके बाद इसे अधिनियम कहा जाएगा) की धारा 119 के परंतुक की अनिवार्य आवश्यकताओं के कारण।

(3) निर्वाचन-याचिकाकर्ता को दिए गए आवेदन की सूचना पर, उसके अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि आवेदन गलत है और इस न्यायालय के पास सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को खत्म करने या जोड़ने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, जिसने उच्च न्यायालय में पक्षों द्वारा किए गए खर्च के बारे में कोई आदेश नहीं दिया। आवेदक ने प्रस्तुत किया है कि अपील मूल कार्यवाही की निरंतरता है और मामले की सुनवाई का एक हिस्सा है जो इस विशेष मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की घोषणा के साथ ही समाप्त हो गई। उन्होंने दलील दी है कि सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय निर्वाचन याचिका को अधिनियम की धारा 98 (ए) के तहत खारिज करने जैसा और इसलिए, उच्च न्यायालय में उसके द्वारा किए गए खर्च को विपरीत पक्ष से वसूल करना उसका वैधानिक अधिकार है, हालांकि सर्वोच्च न्यायालय में उसके द्वारा किए गए खर्च का भुगतान नहीं किया गया है और उसके लिए क्योंकि वे उस न्यायालय के उनके आधिपत्य के विवेक पर निर्भर थे। आवेदक के अनुसार अधिनियम की धारा 119 की तहत एक निर्वाचन याचिका को खारिज करने पर लागू होती है, भले ही इसे उच्च न्यायालय में प्रारंभिक चरण में या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपीलीय चरण में खारिज कर दिया गया हो।

(4) दूसरी ओर, उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता श्री एच.एस.हुड्डा ने प्रस्तुत किया है कि धारा 119 का परंतुक उसी चरण पर लागू होता है जिस पर उस धारा का दायरा लागू होता है, अर्थात, वह चरण जिस पर उच्च न्यायालय लागत के प्रश्न पर निर्णय लेने के मामले में उसे आम तौर पर अपने विवेक का प्रयोग करना पड़ता है। विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि इस न्यायालय द्वारा धारा 99 के तहत कोई भी आदेश पारित करने का चरण 24 दिसंबर, 1970 को समाप्त हो गया था, और इस न्यायालय के पास उस दिन के बाद मामले से निपटने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है जब तक कि न्यायालय को कोई विशेष कार्य करने का निर्देश न दिया जाए, सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य के आदेश द्वारा। उस आधार पर उन्होंने तर्क दिया है कि अधिनियम

की धारा 121 के तहत यह केवल एक पार्टी है जिसके पक्ष में लागत का फैसला किया गया है, जिसे प्रतिभूति राशि से या अन्यथा लागत की राशि के भुगतान के आदेश के लिए आवेदन करने की अनुमति दी गयी। उन्होंने अग्रसर प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय के निर्णय और आदेश को मिटा दिया गया है, एकमात्र ऑपरेटिव आदेश, जो क्षेत्र को धारण करता है, वह इस सर्वोच्च न्यायालय के औपचारिक आदेश का उपरोक्त उद्धृत भाग है। अधिवक्ता का कहना है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस न्यायालय की लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं देना उनके आधिपत्य के यह कहने के समान है कि उच्च न्यायालय में पक्षों द्वारा की गई लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाएगा।

(5) मेरे मन में कोई संदेह नहीं है कि सर्वोच्च न्यायालय के आधिपत्य, उनके समक्ष आवेदक की अपील का निपटारा करते हुए, उनके समक्ष, इस न्यायालय में पक्षों द्वारा किए गए खर्च के संबंध में एक आदेश पारित कर सकता था। वास्तव में विभिन्न निर्णयों के संदर्भ में, जिनके तहत निर्वाचन अपीलों का निर्णय पहले सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य द्वारा किया जाता था, यह दर्शाता है कि जब भी उनके आधिपत्य का इरादा उच्च न्यायालय में पार्टियों द्वारा किए गए खर्च के संबंध में कोई आदेश पारित करने का था तब उन्होंने मामले को किसी भी संदेह में नहीं छोड़ा। **दल चंद जैन बनाम नारायण शंकर त्रिवेदी(असूचित निर्णय (एस.सी.) 23 (1969), 30 जनवरी 1968 को निर्णय लिया गया)**(में, अंत में उनका आधिपत्य ने इस प्रकार निर्धारित किया :-

> "परिणामस्वरूप, अपील को अनुमति दी जाती है और धारा 98 (बी) और 99 के तहत उच्च न्यायालय के आदेशों को खारिज कर दिया जाता है और निर्वाचन याचिका खारिज कर दी जाती है। उत्तरदाता संख्या 1, अपीलकर्ता को इस न्यायालय में और उच्च न्यायालय में लागत का भुगतान करेगा।"

फिर **अब्दुल गनी नामथली बनाम गुलाम मोहम्मद पारे (असूचित निर्णय (एस.सी.) 83 (1969), 17 अप्रैल, 1963 को निर्णय लिया गया।)** में, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का ऑपरेटिव हिस्सा इस प्रकार है: -

"इसलिए, अपील को अनुमति दी जाती है और निर्वाचन याचिका खारिज कर दी जाती है। लेकिन मामले की परिस्थितियों में, विशेष रूप से निर्वाचन याचिका के परीक्षण में अनियमितता को देखते हुए, हम पार्टियों को भुगतान करने और पूरी लागत स्वयं वहन करने का निर्देश देते हैं।"

निर्वाचन अपील में उच्च न्यायालय के निर्णय को पलटने के मामले में इसी तरह के आदेशों का एक और उदाहरण **अतम दास बनाम सुरियाँ प्रसाद (असूचित निर्णय (एस.सी.) 63 (1969))** के फैसले से प्रस्तुत किया गया है, जिसमें उनके आधिपत्य के फैसले का अंतिम पैराग्राफ है इन निम्नलिखित शब्दों में है :

"अपील स्वीकार की जाती है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया जाता है। उत्तरदाता को निचली अदालत के साथ-साथ इस न्यायालय में मुद्दों पर निष्कर्षों को दर्ज करने के लिए सुनवाई की लागत सहित लागत का भुगतान करेगा।"

निर्वाचन अपील में उच्च न्यायालय के निर्णय को पलटने के मामले में इसी तरह के आदेशों का एक और उदाहरण **श्री राम देव बनाम श्रीमती सरला पराशर और अन्य (सी.ए. 1969 की संख्या 2048 (एनसीई), 19 अगस्त, 1970 को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय किया गया।)** का निर्णय है, जिसमें निर्णय का अंतिम पैराग्राफ निम्नलिखित शब्दों में है:-

"इसलिए, अपील की अनुमति दी जाती है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया जाता है। अपीलकर्ता इस न्यायालय और उच्च न्यायालय में अपनी लागत का हकदार होगा।"

(6) समान आदेशों को गुणा करने के किसी भी प्रयास के बिना, मैं कम से कम एक और निर्णय देख सकता हूँ जो इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है। **जे.के. चौधरी बनाम वीरेंद्र चंदर (सी.ए. क्रमांक 1702 सन् 1968, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 8 अप्रैल 1969 को निर्णीत।)** में, उनका आधिपत्य द्वारा इस प्रकार प्रेक्षित किया गया:

> "उपर्युक्त कारणों से यह अपील सफल होती है और निचली अदालत के निर्णय को रद्द कर दिया जाता है और निर्वाचन याचिका को इस कोर्ट के साथ-साथ निचली अदालत में भी लागत के साथ खारिज कर दी जाती है।"

चूँकि मेरे समक्ष आवेदक का मुख्य दावा अधिनियम की धारा 119 पर आधारित है, इसलिए मैंने केवल निर्वाचन मामलों में अपीलीय निर्णयों का उल्लेख किया है, और उनके आधिपत्य द्वारा तय की गई कई सिविल अपीलों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं समझा है जिनमें निर्देश भी हैं न केवल सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष, बल्कि निचली अदालतों में भी पक्षों द्वारा किए गए खर्चों के संबंध में हमेशा जानकारी दी गई है।

(7) वर्तमान मामले में उनके आधिपत्य के निर्णय का अंतिम पैराग्राफ निम्नलिखित शब्दों में है:-

> "इन कारणों से, उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया गया है। अपील की अनुमति है। निर्वाचन याचिका खारिज कर दी जाएगी। पार्टियां इस अपील में अपनी लागत का भुगतान और वहन करेंगी।"

यह निर्णय का उपरोक्त उद्धृत ऑपरेटिव हिस्सा है जो सर्वोच्च न्यायालय के औपचारिक आदेश में परिलक्षित हुआ है जिसका संदर्भ इस आदेश की शुरुआत में किया गया है। मुझे लगता है कि मुझसे जो करने के लिए कहा जा रहा है वह सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को बढ़ाना है जिसने केवल उस अदालत के समक्ष अपील में पार्टियों द्वारा किए गए खर्च के संबंध में एक आदेश पारित किया और कोई आदेश पारित नहीं किया उच्च न्यायालय में उनके द्वारा किए गए खर्च के संबंध में, हालांकि उनके आधिपत्य ऐसे आदेश पारित करने के लिए स्वीकार्य रूप से सक्षम थे, और यदि उस न्यायालय का ऐसा करने का इरादा है तो उस आशय का आदेश पारित करना सामान्य बात है।इस स्थिति से मैं जो एकमात्र निष्कर्ष निकाल पा रहा हूँ वह यह है कि उच्च न्यायालय में पक्षों द्वारा किए

गए खर्च के संबंध में उनके आधिपत्य ने कोई आदेश पारित नहीं किया है। अब्दुल गनी नामथली के मामले (2) (सुप्रा) में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अधिनियम की धारा 119 के परंतुक का अपीलीय चरण में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्वाचन याचिका को खारिज करने के लिए कोई अनुप्रयोग नहीं है।

(8) मुझे श्री हुडा के इस कथन में बहुत प्रभाव दिखता है कि धारा 119 का परंतुक केवल उस धारा के दायरे के अपवाद के रूप में कार्य करता है, न कि एक स्वतंत्र प्रावधान के रूप में, और इसलिए, संबंधित पक्ष अधिकार के तौर पर परंतुक को केवल उस स्तर पर लागू करने का अधिकार है जब उच्च न्यायालय को उस धारा के दायरे के तहत लागत के मामले में अपने विवेक का प्रयोग करने के लिए कहा जाता है। वह स्थिति मेरे सामने 24 दिसंबर, 1970 को पहुंच गई थी, जब मैंने अधिनियम की धारा 98(बी), 99 और 119 के तहत आदेश पारित करके निर्वाचन याचिका का निपटारा कर दिया था। अधिनियम की धारा 98 और 99 के तहत आदेश पारित करके निर्वाचन याचिका के निपटान के बाद, यह न्यायालय समाप्ताधिकार बन गया और अब इस मामले पर उसका कोई अधिकार नहीं है। इसलिए, मेरे लिए सर्वोच्च न्यायालय के उस निर्णय में कुछ भी जोड़ना संभव नहीं है जो इस न्यायालय के मूल फैसले के स्थान पर आता है।

(9) अधिनियम की धारा 80 और 80-ए को संयुक्त रूप से पढ़ने से पता चलता है कि एकमात्र "निर्वाचन याचिका पर विचार करने का क्षेत्राधिकार रखने वाला न्यायालय" उच्च न्यायालय है। "निर्वाचन याचिका के मुकदमे के निष्कर्ष" का चरण केवल उच्च न्यायालय के समक्ष ही पहुँचता है। यह उस चरण में है कि धारा 98 लागू होती है और उच्च न्यायालय को उस धारा के खंड (ए) से (सी) में निर्दिष्ट आदेशों में से कोई एक आदेश देने की आवश्यकता होती है। अधिनियम के भाग VI के अध्याय V में धारा 117 से 121 तक निर्वाचन याचिका के चरणों से संबंधित है - याचिका दायर करने से शुरू होने और उच्च न्यायालय द्वारा इसके निपटान के साथ समाप्त होने पर। धारा 119 की भाषा इस मामले में कोई संदेह नहीं छोड़ती है कि यह धारा, धारा 98 के तहत किसी निर्वाचन याचिका के निपटान के समय उसकी लागत तय करने में उच्च न्यायालय के विवेक के प्रश्न से संबंधित है। सर्वोच्च न्यायालय याचिका

की निपटान नहीं करता है धारा 98 के तहत, लेकिन अध्याय IV-ए के तहत। वह अध्याय धारा 118-ए से शुरू होता है जो धारा 98 और/या धारा 99 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में अपील दाखिल करने का प्रावधान करता है। धारा 116-सी(1), जो निर्वाचन अपील की सुनवाई और निर्धारण के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पालन की जाने वाली प्रक्रिया को निर्धारित करती है, निम्नलिखित शब्दों में है: -

> "इस अधिनियम के प्रावधानों और इसके तहत बनाए गए नियमों, यदि कोई हों, के अधीन रहते हुए, प्रत्येक अपील की सुनवाई और निर्णय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यथासंभव सुनवाई के लिए लागू प्रक्रिया के अनुसार किया जाएगा और अपने मूल नागरिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में उच्च न्यायालय द्वारा पारित किसी अंतिम आदेश से अपील का निर्धारण, और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम 5) और न्यायालय के नियमों के सभी प्रावधान (प्रतिभूति प्रदान करने और न्यायालय के किसी भी आदेश के निष्पादन के प्रावधानों सहित) जहां तक संभव हो, ऐसी अपील के संबंध में लागू होगा।"

यह परंतुक दर्शाता है कि अधिनियम के तहत निर्वाचन अपील के निर्धारण के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पालन की जाने वाली प्रक्रिया नागरिक प्रक्रिया संहिता में प्रदान की गई है, जहां तक यह लागू है और संविधान के अनुच्छेद 145 के तहत सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों में निहित प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन होगी। सिविल अपील न्यायालय की शक्तियाँ संहिता के आदेश 41 के नियम 33 में दी गई हैं। उस प्रावधान में कहा गया है कि अपीलीय न्यायालय को किसी भी डिक्री को पारित करने और कोई भी आदेश देने की शक्ति है और जिसे पारित किया जाना चाहिए या बनाया जाना चाहिए और मामले की आवश्यकता के अनुसार ऐसी अग्रसर या अन्य डिक्री या आदेश पारित करना या करना चाहिए। अपीलीय डिक्री की सामग्री संहिता के आदेश 41 के नियम 36 में वर्णित है। नियम 35 का उपनियम (3) निम्नानुसार प्रदान करता है:-

> "डिक्री में यह भी बताया जाएगा कि अपील में खर्च की गई लागत की राशि, और किसके द्वारा, या किस संपत्ति से, और किस अनुपात में ऐसी लागत और मुकदमे में लागत का भुगतान किया जाना है।"

इससे पता चलता है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के लिए अपीलीय न्यायालय को न केवल अपील में पार्टियों द्वारा किए गए खर्चों के संबंध में, बल्कि परीक्षण चरण में किए गए खर्चों के संबंध में भी एक निश्चित निर्देश देने की आवश्यकता होती है। हालाँकि, सिविल प्रक्रिया संहिता सर्वोच्च न्यायालय की कार्यवाही पर लागू नहीं होती है, जो संविधान के अनुच्छेद 145 के तहत बनाए गए सर्वोच्च न्यायालय के नियमों द्वारा शासित होती है। इसीलिए "जहाँ तक हो सके" अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है सिविल संहिता के प्रावधानों की प्रयोज्यता के संबंध में, अधिनियम की धारा 116-सी में सर्वोच्च न्यायालय में अपीलों की सुनवाई और निर्धारण के लिए। इसका परिणाम यह है कि यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय को निर्वाचन याचिका का निपटारा करते समय निर्वाचन याचिका में उच्च न्यायालय में हुई लागत के संबंध में आदेश पारित करने का अधिकार है, लेकिन वह उस संबंध में आदेश पारित करने के लिए बाध्य नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय के साथ-साथ निचली अदालत में पार्टियों द्वारा की गई लागत सर्वोच्च न्यायालय के विवेक पर निर्भर करती है, जो सुप्रीम कोर्ट नियम, 1966 के नियम 1 आदेश XLI के अनुसार, जो निम्नलिखित शर्तों में है: -

> "किसी भी क़ानून या इन नियमों के प्रावधानों के अधीन, सभी कार्यवाहियों की लागत और उनसे संबंधित लागत न्यायालय के विवेक पर होगी। जब तक न्यायालय अन्यथा आदेश न दे, हस्तक्षेपकर्ता लागत का हकदार नहीं होगा।"

यह नियम उनके आधिपत्य को मुकदमे के प्रारंभिक चरण से ही मुकदमे में होने वाली लागत के संबंध में कोई भी निर्देश देने के लिए अधिकृत करता है। एक बार अधिनियम की धारा 119 के तहत इस न्यायालय का आदेश सुनाए जाने के बाद, निर्वाचन याचिका की लागत के भुगतान का प्रावधान करने के संबंध में इस न्यायालय का कार्य समाप्त हो जाता है। जैसे ही अधिनियम की धारा 116-ए के तहत उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील की जाती है, उस

न्यायालय के साथ-साथ निचली अदालत में पक्षों द्वारा किए गए खर्च के भुगतान के दायित्व का प्रश्न विशेष क्षेत्राधिकार और सर्वोच्च न्यायालय का विवेक के अंतर्गत आता है।। मौजूदा मामले में निर्वाचन याचिका को अधिनियम की धारा 98 (ए) के तहत उच्च न्यायालय द्वारा कभी भी खारिज नहीं किया गया था और इसलिए धारा 119 का प्रावधान किसी भी स्तर पर लागू नहीं हुआ था। सर्वोच्च न्यायालय के आदेश से अधिनियम की धारा 116-सी के तहत याचिका खारिज कर दी गई है।

(10) इसलिए, धारा 119 का परंतुक इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। यदि ऐसा नहीं होता और यदि आवेदक का तर्क मान्य होता, तो सर्वोच्च न्यायालय अब्दुल गनी नामथली के मामले (2) में निर्वाचित उम्मीदवार को उच्च न्यायालय में चुनाव याचिका का बचाव करने में होने वाली अपनी लागत वहन करने के लिए नहीं छोड़ सकता था, उनकी अपील को स्वीकार करते हुए और अपीलीय चरण में निर्वाचन याचिका को खारिज करते हुए।

(11) उपरोक्त कारणों से मेरा मानना है कि यह आवेदन रखरखाव योग्य नहीं है। तदनुसार, लागत के बारे में कोई आदेश दिए बिना इस आवेदन खारिज कर दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

ऋतु तंवर

प्रिशक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

हरियाणा न्यायिक सर्विसेज़